दिल्ली में मोदी को केजरीवल की कड़ी चुनौती

-मनोज कुमार झा

दिल्ली में चुनाव का दंगल शुरू हो चुका है। भारतीय जनता पार्टी की पूरी कोशिश है कि किसी भी तरह से दिल्ली की सत्ता पर कब्ज़ा करे। पिछली बार भाजपा को इसमें सफलता नहीं मिली थी। आम आदमी पार्टी के नेता अरविंद केजरीवाल मुख्यमंत्री बने। यह कांग्रेस और भाजपा के लिए बहुत बड़ी शिकस्त थी, क्योंकि आम आदमी पार्टी एक नए तरह के आंदोलन की उपज थी और परंपरागत पार्टियों से बहुत कुछ अलग थी। लेकिन लोकपाल बिल पास न होने के कारण अरविंद केजरीवाल ने 49 दिनों के बाद ही मुख्यमंत्री पद से इस्तीफ़ा दे दिया था और तब से वहां राष्ट्रपति शासन चल रहा है। अब 17 फ़रवरी तक वहां नई सरकार का गठन होना है। दिल्ली की सत्ता पर कब्ज़ा करने के लिए मुख्य मुकाबला भाजपा और आम आदमी पार्टी के बीच है। यह सीधा मुकाबला है। अन्य कोई दल इस मुकाबले में शामिल नहीं है।

चुनाव पूर्व कई सर्वेक्षणों में यह जाहिर हो चुका है कि अरविंद केजरीवाल दिल्ली के वोटरों की पहली पसंद बने हुए हैं। अरविंद केजरीवाल गंदगी का पर्याय बन चुकी भारतीय राजनीति में ताज़ा हवा के झोंके की तरह आए थे। इन्हें बुद्धिजीवियों के अलावा ग़रीब तबकों का भी पूरा समर्थन मिला था। और इसी समर्थन की बदौलत वो सत्ता हासिल कर पाने में सफल रहे। अरविंद केजरीवाल ने एक नई तरह की राजनीति की शुरूआत की थी। बड़े कॉरपोरेट घरानों को उन्होंने सीधा निशाना बनाया और शासन-प्रशासन के कुछ ऐसे तौर-तरीके अपनाए जो पहले कभी देखने-सुनने को नहीं मिले थे। जाहिर है, सत्ता के वर्तमान ढांचे में अरविंद केजरीवाल फ़िट होने वाले नहीं थे। वर्तमान सत्ता पूंजीपतियों के समर्थन और सहयोग के बिना नहीं चल सकती। पूंजीपति ही वर्तमान सत्ता के ढांचे की चालक शक्ति हैं। यह बात शायद अरविंद केजरीवाल की समझ में आ गई है। जाहिर है, वे वर्तमान सत्ता का ऐसा विकल्प तो हर्गिज नहीं बन सकते। जो जनहित के मुद्दों पर आधारित हो, जो जनता को उसके कष्टों से छुटकारा दिला सके, उसके जीवन में सकारात्मक बदलाव ला सके। यह काम तो तभी हो सकता है, जब व्यापक जनक्रांति हो जिसके आसार दूर-दूर तक नहीं नज़र आते। तो क्या माना जाए कि अरविंद केजरीवाल अन्य पूंजीवादी दलों के नेताओं की तरह ही है?

पूरी तरह यह कहना उचित नहीं होगा। दरअसल, अरविंद केजरीवाल इस सड़ांध मार रहे सिस्टम में सुधार के पैरोकार हैं और जनता लुटेरे नेताओं से आजिज आ गई है। वह राहत चाहती है। अरविंद केजरीवाल में उसे राहत मिलने की उम्मीद दिखती है। तमाम दलों के नेताओं के साथ मीडिया भी अरविंद केजरीवाल का मज़ाक उड़ाने में आगे रहा है, क्योंकि वह सुधार तक नहीं चाहता। अगर जनक्रांति नहीं तो सुधार ही सही। जरूरत तो है इसकी। पर विडंबना ये है कि वर्तमान व्यवस्था सुधार के काबिल भी नहीं रह गई है। लेकिन जनता को राहत की इतनी ज़्यादा दरकार है कि वह अरविंद केजरीवाल के समर्थन में है। यह अलग बात है कि उन्हें जीत मिलती है या नहीं, पर भाजपा के लिए एक बड़ी चुनौती तो वे बन ही गए हैं।

लोकसभा चुनाव के दौरान देश में नरेन्द्र मोदी की लहर चल रही थी। अरविंद केजरीवाल ने बनारस में उनके ख़िलाफ़ चुनाव लड़कर उन्हें चुनौती दी। उनका हारना तय था, पर चुनौती देना भी कम मायने नहीं रखता। इसलिए अरविंद केजरीवाल भले ही लोकसभा चुनाव में कोई उपलब्धि हासिल नहीं कर सके, लेकिन उन्होंने चुनौती देने की हिम्मत तो दिखाई। बहरहाल, लोकसभा चुनाव में भारी जीत दर्ज करने के बाद से नरेन्द्र मोदी अपनी तथाकथित हवा के बल पर लगातार चुनाव जीतते चले जा रहे हैं, यानी भाजपा चुनाव जीतती चली जा रही है। उसे आशातीत सफलता मिल रही है। लेकिन साथ ही, देश में जैसा माहौल बनता जा रहा है, उससे ज़्यादा लोग असंतुष्ट ही नज़र आते हैं। इसकी वजह है कि जो वायदे नरेन्द्र मोदी ने जनता से किए थे, उनमें एक भी पूरा नहीं हुआ। इसके विपरीत पूरे देश में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और संघ परिवार के संगठनों ने खुले तौर पर साम्प्रदायिक माहौल बनाना शुरू कर दिया। संघ और अन्य भगवा संगठनों के ऐसे-ऐसे बयान लगातार आते रहे हैं, जो बहुत ही आपत्तिजनक हैं, पर उन पर कोई लगाम लगाने वाला नहीं।

भूलना नहीं होगा कि विकल्पहीनता के शून्य के बीच और साम्प्रदायिक समीकरणों के बदौलत नरेन्द्र मोदी सत्ता में आ सके। इसके अलावा देशी-विदेशी पूंजीपतियों का पूरा समर्थन उन्हें मिला। पूंजीपतियों ने उनके लिए अपनी थैलियां खोल दी। पर तय है कि अर्थव्यवस्था संकट के जिस भवर में पड़ चुकी है, उससे लाख खुलेपन की नीतियां अपनाने के बावजूद निकल पाना संभव नहीं। लूट को चरम सीमा पर पहुंचाने के बावजूद नरेन्द्र मोदी पूंजीपतियों की उम्मीदों पर खरे नहीं उतर सकते। लेकिन क्या कोई विकल्प है? विकल्प नहीं है। राष्ट्रीय स्तर पर केजरीवाल नरेन्द्र मोदी के विकल्प बनेंगे या इनके जैसे सुधारवादी? संभव नहीं। फ़िर भी ये कम नहीं कि अरविंद केजरीवाल दिल्ली में भाजपा के लिए चुनौती पेश कर रहे हैं। इन्होंने कम से कम यह तो दिखा दिया है कि अभी भी दिल्ली में भारी संख्या में लोग उनके पीछे हैं और वे बदलाव चाहते हैं। दूसरी तरफ़, कांग्रेस हो या जनता परिवार के रूप में संगठित होने की कोशिश में लगे अन्य दल, कोई दिल्ली में नरेन्द्र मोदी के मुकाबले अपने को कहीं नहीं पा रहा है। इससे जाहिर होता है कि केजरीवाल टाइप सुधारवादी राजनीति की जरूरत देश में है। और इस तरह के सुधारवादी संगठन काफ़ी हद तक राजनीतिक रूप से सफल हो सकते हैं। यही मूलभूत बदलाव की पूर्व-पीठिका तैयार कर सकते हैं। इस रूप में आम आदमी पार्टी और अरविंद केजरीवाल के महत्त्व को कम करके नहीं आंका जा सकता।

इसे आम आदमी पार्टी का प्रभाव ही कहेंगे कि भाजपा दिल्ली में नरेन्द्र मोदी के नाम पर चुनाव नहीं लड़ रही। भगवा पार्टी को अपनी रणनीति में बदलाव करना पड़ा। उसने रातोंरात एक समय केजरीवाल की सहयोगी रही पूर्व आईपीएस अधिकारी किरण बेदी को पार्टी में शामिल किया और उन्हें मुख्यमंत्री पद का दावेदार घोषित किया। यह दिखाता है कि मोदी को ख़ुद अब अपनी लहर पर यकीन नहीं रह गया है।

इसे आम आदमी पार्टी का प्रभाव ही कहेंगे कि भाजपा दिल्ली में नरेन्द्र मोदी के नाम पर चुनाव नहीं लड़ रही। भगवा पार्टी को अपनी रणनीति में बदलाव करना पड़ा। उसने रातोंरात एक समय केजरीवाल की सहयोगी रही पूर्व आईपीएस अधिकारी किरण बेदी को पार्टी में शामिल किया और उन्हें मुख्यमंत्री पद का दावेदार घोषित किया। यह दिखाता है कि मोदी को ख़ुद अब अपनी लहर पर यकीन नहीं रह गया है। भूलना नहीं होगा कि जम्मू-कश्मीर में मोदी-अमित शाह का मिशन फेल हो गया, फिर भी वहां उल्लेखनीय सफलता उन्हें मिली है। झारखंड में भाजपा को बहुमत मिल गया। बिहार, यूपी और बंगाल अगला निशाना है। वहां कमज़ोर दलों और नेताओं को देखते हुए सफलता मिलने की पूरी उम्मीद है भाजपा को, पर दिल्ली में अलग ही कहानी लिखी जा रही है, इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता। दिल्ली में मोदी-अमितशाह को गेम प्लान चेंज करना पड़ा। इसी के तहत अरविंद केजरीवाल के मुकाबले किरण बेदी को खड़ा किया गया है, जो एक समय उनके साथ थीं। साथ ही, अरविंद केजरीवाल की पुरानी सहयोगी शाजिया इल्मी को भी भाजपा में लाया गया। असंतुष्ट विनोद कुमार बिन्नी और कांग्रेस से कृष्णा तीरथ को भाजपा ने अपने पाले में ले लिया। यह सब इसलिए किया जा रहा है, ताकि किसी तरह आम आदमी पार्टी और अरविंद केजरीवाल को हराया जा सके।

पर मुकाबला कड़ा है। यह ठीक है कि अरविंद केजरीवाल ने कई ग़लतियां की हैं और अपने इर्द-गिर्द कई ऐसे लोग़ों को जमा कर लिया जो उनके लिए घातक साबित हुए। शाजिया और बिन्नी ने साफ़ रंग दिखा दिया, पर कवि कुमार विश्वास भी उन्हें अपना असली रंग दिखा कर रहेंगे, ये अलग बात है कि इस भड़ैत पर अरविंद केजरीवाल को अभी भी भरोसा है। ऐसे ही तत्वों ने उनका नुकसान किया है और यदि वे संभलते नहीं तो ये आगे भी उनका नुकसान ही करेंगे।

बहरहाल, दिल्ली विधानसभा का चुनाव यह तय कर देगा कि भाजपा का आने वाले दिनों में क्या होगा। यह बात खास है कि दिल्ली भाजपा में ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जो किरण बेदी को दिल्ली मुख्यमंत्री पद का दावेदार घोषित किए जाने से ख़फ़ा हैं। अमित शाह के प्रति असंतोष भाजपा में पनप रहा है। अगर उनका गेम प्लान फ़ेल होता है, तो असंतोष खुलकर सामने आ जाएगा। यह भी कहा जा रहा है कि संघ के भी कतिपय नेता किरण बेदी को सीएम कैंडिडेट घोषित करने से नाराज हैं। इसके पीछे मुख्य वजह यह है कि संघ चाहता है कि मुख्यमंत्री संघ परिवार का ही हो, बाहर से न लाया जाए, जैसा महाराष्ट्र, हरियाणा और झारखंड में हुआ। इन तीनों राज्यों के मुख्यमंत्री संघ से जुड़े रहे हैं।

कहा जा रहा है कि किरण बेदी को सामने लाने के पीछे अमित शाह की मंशा ये है कि अगर जीत हो तो इसका श्रेय मोदी और उन्हें मिले, वहीं हार की स्थिति में इसका ठीकरा किरण बेदी के माथे पर फ़ोड़ा जाए। किरण बेदी तो पर्चा दाखिल करते ही खुद को मुख्यमंत्री मानकर ही चल रही हैं। ग़जब का आत्मविश्वास है उनका। पर यह बात ध्यान में रहनी चाहिए कि अति आत्मविश्वास खतरनाक भी होता है। भाजपा तो उनका। इस्तेमाल कर रही है। कामयाब हुई तो ठीक, नहीं हुई तो डस्टबिन में डाल दी जाएंगी। पुलिसगीरी और राजनीति में क्या फ़र्क है, ये किरण बेदी को शायद अभी पता नहीं, पर अरविंद केजरीवाल काफ़ी हद तक राजनीति सीख चुके हैं। तभी तो वोटरों से ये कह रहे हैं कि पैसे सभी से ले लो, पर वोट उन्हें ही दो। यानी पूंजीवादी राजनीति के तिकड़म करने से भी वे बाज नहीं आ रहे। कहा जा सकता है कि जब सभी चड्डी तक उतार रहे हैं तो वे बनियान भी न उतारें? यही तो अरविंद केजरीवाल की सीमा है। पर जनता को इससे क्या! उसे थोड़ी राहत चाहिए। जनकवि बाबा नागार्जुन की काव्य पंक्तियां है-ना हम दक्षिण ना हम वाम, जनता को रोटी से काम।

तो जनता को बदलाव चाहिए। अगर दिल्ली विधानसभा चुनाव में अरविंद केजरीवाल भाजपा को हराने में कामयाब हो पाते हैं तो यह उनकी एक बड़ी उपलिब्ध होगी और निस्संदेह इसका असर देश की राजनीति पर भी पड़ेगा। मोदी और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की असली परीक्षा है दिल्ली विधानसभा चुनाव। संघ का विश्वास जीतने के लिए किरण बेदी उसे राष्ट्रवादी संगठन बता रही हैं, पर भूलना नहीं होगा कि पहले उन्होंने संघ के ख़िलाफ़ कैसी टिप्पणियां की हैं। यही हाल शाजिया का रहा है। रहे कवि कुमार विश्वास तो वे पहले से ही अटल के प्रशंसक रहे हैं। अरविंद केजरीवाल को उनसे सावधान रहने की जरूरत है। मौका आने पर यह आदमी किसी भी तरह का समझौता कर सकता है।

खास बात है कि अरविंद केजरीवाल जनता परिवार के रूप में एकजुट होने की कोशिश कर रहे राजनीतिक दलों से दूरी बना कर चल रहे हैं और ये दल भी दिल्ली विधानसभा चुनाव में अपने लिए कहीं कोई जगह तलाश नहीं कर पा रहे। इससे स्पष्ट हो जाता है कि ये संघ और मोदी की चुनौती का सामना नहीं कर सकते। इनके दिन भी लगता है कांग्रेस की तरह ही लद गए। अब अगर दिल्ली में भाजपा की जीत होती है, तो अन्य राज्यों में उसकी विजय का मार्ग प्रशस्त होगा। अगर अरविंद केजरीवाल जीतते हैं, तो भाजपा और संघ को नई चालें चलनी पड़ेंगी। जो भी हो, खोखले वायदे कर और जनता को सब्ज़बाग दिखा सत्ता में आने वाले नरेन्द्र मोदी के प्रति जनता में असंतोष तो है ही, यह विस्फ़ोटक रूप ले सकता है यदि दिल्ली की सत्ता अरविंद केजरीवाल के हाथ आती है।

तुर्की-ब-तुर्की

''अगर केजरीवाल ने भाजपा और कांग्रेस से पैसे बेशक लो और वोट 'आप' को दो बयान देना जारी रखा तो सख्त कार्यवाही की जायेगी।''

(निर्वाचन आयोग द्वारा केजरीवाल को यह चेतावनी इस संदर्भ में दी गयी कि वे लगातार भाजपा और कांग्रेस की धन शक्ति की चुनावी भूमिका को नंगा करते रहे हैं।)

हमारा कहना है:-

- केजरीवाल ने ग़लत क्या कहा जो निर्वाचन आयोग के पेट में इतना भयानक दर्द शुरू हो गया। कौन नहीं जानता कि चुनावों में काला धन कितनी बड़ी भूमिका अदा करता आया है। गत लोकसभा चुनाव में स्वयं आयोग के अधिकारियों ने सैंकड़ों करोड़ रुपये पकड़े थे। यहां तक कि रामदेव को एक भाजपा प्रत्याशी से काले धन को छिपा कर चुनाव प्रचार में लगाने का तरीका बताने को रिकार्ड किया गया था। यह अलग बात है कि इन तमाम मामलों में निर्वाचन आयोग समुचित निरोधक कार्यवाही करने में असमर्थ रहा है।
- निर्वाचन आयोग का रवैया कुछ वैसा ही है कि डकैती डाले दाढ़ी वाला और पकड़ा जाय मूंछ वाला। दूसरे शब्दों में भाजपाई और कांग्रेसी तो हज़ारों करोड़ खर्चें और आर टी आई के अन्तर्गत इस खर्च की जानकारी भी न देना चाहें। दूसरी तरफ़ केजरीवाल और उनकी पार्टी एक-एक पैसे का हिसाब दें और निर्वाचन आयोग की धौंस भी सहें।
- क्या निर्वाचन आयोग की इस देश के नागरिकों के प्रति जवाबदेही नहीं बनती है कि चुनाव में काला धन क्यों खुल कर खेलने दिया जा रहा है? यू दिखावे के लिये हर निर्वाचन क्षेत्र में आधा दर्जन प्रयवेक्षक लगाये जाते हैं पर ये आयोग के सफ़ेद हाथी ही बन कर रह जाते हैं। सारा खेल खुले आम चलता है लेकिन आयोग को कुछ नज़र नहीं आता। इतने नोटिसों के बाद केजरीवाल को तो चुप करा दिया गया है पर काले धन की थैलियों का मुंह बड़े से बड़ा होने दिया जा रहा है।
- निर्वाचन आयोग की आंखों पर पट्टी इस कदर बंधी है कि उसे भाजपा का साम्प्रदायिक प्रचार नज़र ही नहीं आता। जब इस विषय में केजरीवाल ने बयान दिया तो उल्टे उन्हें ही साम्प्रदायिकता फ़ैलाने के आरोप का नोटिस पकड़ा दिया गया। जबकि आयोग की भूमिका एक निष्पक्ष रैफ़री की होनी चाहिये थी।